

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 3 अध्याय 33: देवहूति ज्ञान का प्रकाश प्राप्त करती हैं तथा परम मुक्ति को प्राप्त होती हैं

13 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



अपने पुत्र के प्रति देवहूति का प्रेम अविच्छिन्न ध्यान में इस प्रकार गहराता गया कि जिस भूमि पर वे खड़ी थीं, वह भी उसी भगवान् में विलीन हो गई जिनका वे चिन्तन कर रही थीं — और तभी से उनकी अन्तिम गति का वह स्थल तीनों लोकों में 'सिद्धपद', अर्थात् सिद्धों के चरण-चिह्न, के नाम से स्मरण किया जाता है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। आज हम तृतीय स्कन्ध के तैत्तिरीय तथा अन्तिम अध्याय तक पहुँचते हैं — उस कथा का समापन-दृश्य जो कई अध्याय पूर्व ऋषि कर्दम की तपस्या, देवहूति से उनके विवाह, तथा इस असाधारण वचन के साथ आरम्भ हुई थी कि स्वयं भगवान् का एक अंश उनके पुत्र के रूप में जन्म लेगा। वह वचन भगवान् कपिल के जन्म में पूर्ण हुआ, तथा उसके बाद से अध्याय-दर-अध्याय हम मानो देवहूति के साथ सरस्वती नदी के तट पर स्थित आश्रम में बैठे रहे, यह सुनते हुए कि उनके अपने पुत्र ने उनके समक्ष सांख्य-दर्शन की सम्पूर्ण संरचना को — प्रकृति तथा पुरुष, गुण, जीव की संरचना, योग-अनुशासन, काल की प्रकृति, तथा अन्ततः, इससे ठीक पहले वाले अध्याय में, प्रस्थान के दो मार्ग तथा भक्तियोग की अतुलनीय शीघ्रता — किस प्रकार खोला। अध्याय 33 वह स्थान है जहाँ वह सम्पूर्ण शिक्षा अपना फल देती है। देवहूति केवल वही नहीं समझती जो उन्होंने सुना है — वे उससे रूपान्तरित हो जाती हैं। वे अपने पुत्र की ओर अब और शिक्षा माँगने वाली शिष्या के रूप में नहीं, अपितु उपासना में जागृत होती आत्मा के रूप में मुड़ती हैं, सम्पूर्ण भागवत के सबसे मार्मिक स्तोत्रों में से एक स्तोत्र का पाठ करती हैं, तथा फिर, अध्याय के शान्त उत्तरार्ध में, उस मार्ग पर चलती हैं जो उन्हें दिखाया गया, जब तक कि वे उसके अन्त तक — उस स्थान पर मुक्ति तक — नहीं पहुँच जातीं जो आगे चलकर सिद्धपद, “सिद्धि का स्थान,” कहलाएगा। कपिल, अपनी माता के प्रति अपना कर्तव्य पूर्ण करके, विदा लेते हैं तथा समुद्र के तट पर अपने ही धाम की ओर प्रस्थान करते हैं। और इसी के साथ, “भगवान् कपिल की कथा” — तथा स्वयं श्रीमद्भागवतम् का तृतीय स्कन्ध — अपने समापन को प्राप्त होता है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 3 (तृतीय स्कन्ध) — स्कन्ध का अन्तिम अध्याय
- अध्याय: 33 (त्रयस्त्रिंश प्रवचन), तृतीय स्कन्ध का तैत्तिरीय तथा अन्तिम अध्याय
- अध्याय-शीर्षक: देवहूति अज्ञान से मुक्त होकर ज्ञान से आलोकित होती हैं और अन्ततः मोक्ष पा लेती हैं
- मुख्य वक्ता: ऋषि मैत्रेय (विदुर को कथा सुनाते हुए); देवहूति (श्लोक 2-8, उनका स्तोत्र); भगवान् कपिल (श्लोक 10-11)
- मुख्य श्रोता (कथा-ढाँचे के भीतर): विदुर, जो यह सम्पूर्ण कथा ऋषि मैत्रेय से सुन रहे हैं
- मुख्य स्थान: सरस्वती नदी के तट पर ऋषि कर्दम का आश्रम, तथा तत्पश्चात्, उत्तर-पूर्व की ओर समुद्र का तट, जहाँ भगवान् कपिल अपना अन्तिम धाम ग्रहण करते हैं
- मुख्य विषय-वस्तु: देवहूति का शिष्या से भक्त बनना; कपिल की स्तुति में उनका स्तोत्र, जिसमें वे कपिल को परम पुरुष के रूप में पहचानती हैं; कपिल का अन्तिम निर्देश तथा प्रस्थान; देवहूति द्वारा अपने दिव्य घर का त्याग; अपने पुत्र को भगवान् मानकर उनके ध्यान में उनका क्रमिक लीन होना; सिद्धपद नामक पावन स्थान पर उनकी परम मुक्ति की प्राप्ति, तथा उनके नश्वर शरीर का एक पावन नदी में रूपान्तरण; कपिल का समुद्र-तट पर अपने धाम में जाना; तथा इस सम्पूर्ण संवाद को सुनने अथवा सुनाने के फल का समापन-वक्तव्य
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 3, अध्याय 33, श्लोक 1-37
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण
- शृंखला-टिप्पणी: यह अध्याय तृतीय स्कन्ध (तृतीय पुस्तक) को पूर्णतः समाप्त करता है। चतुर्थ स्कन्ध (चतुर्थ पुस्तक) मूल पाठ में तुरन्त स्वायम्भुव मनु की पुत्रियों की कथा से आरम्भ होता है।

आवरण फट गया: देवहूति का जागरण

अध्याय का आरम्भ ऋषि मैत्रेय की एक ही, शान्त किन्तु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पंक्ति से होता है, जो अध्याय 24 से ही विदुर को यह सम्पूर्ण कथा सुना रहे हैं। पिछले नौ अध्यायों में कपिल द्वारा सिखाई गई हर बात — दो मार्ग, भक्तियोग की प्रकृति, ब्रह्म तथा जीव की एकता — के पश्चात्, अन्ततः देवहूति के भीतर कुछ बदल जाता है:

मैत्रेय ने पुनः कहना आरम्भ किया: जब देवहूति, ऋषि कर्दम की प्रिय पत्नी तथा भगवान् कपिल की माता, ने भगवान् का उपर्युक्त प्रवचन सुना, तब उनके अज्ञान का आवरण फट गया। उन्होंने उन्हें, जो मूलभूत सिद्धान्तों पर प्रकाश डालने वाले सांख्य-ज्ञान के प्रसारक हैं, प्रणाम किया — तथा उनकी इस प्रकार स्तुति की। (श्लोक 1)

ध्यान दें कि मैत्रेय किस क्रिया-पद का चुनाव करते हैं: उनके अज्ञान का आवरण *फट गया*, न कि धीरे-धीरे उठा या घुल गया। यह एक निर्णायक, पूर्ण हो चुकी घटना की भाषा है — पिछले अध्यायों में जो कुछ भी निर्मित हो रहा था, उसकी पराकाष्ठा, जो एक ही क्षण की पहचान में प्रकट होती है। तथा इस पहचान के प्रति उनकी पहली प्रतिक्रिया न तो कोई प्रश्न है, न ही आगे स्पष्टीकरण की माँग (जैसा कि इस संवाद के पूर्ववर्ती अध्यायों में बार-बार हुआ था), अपितु यह उपासना का एक कार्य है। इस क्षण में, शिष्या भक्त बन जाती है।



जब देवहूति ने कपिल की पूर्ण हो चुकी शिक्षा सुनी, तब उनके अज्ञान का आवरण फट गया; उन्होंने उन्हें प्रणाम किया तथा अपना स्तोत्र आरम्भ किया (श्लोक 1)।

देवहूति का स्तोत्र: “तुम स्वयं भगवान् विष्णु हो”

इसके बाद अध्याय — तथा वस्तुतः सम्पूर्ण तृतीय स्कन्ध — के सबसे सुन्दर अंशों में से एक आता है: देवहूति का अपना स्तोत्र, अपने ही पाले हुए पुत्र की स्तुति में, जिसे अब स्वयं परम पुरुष के रूप में पहचाना गया है। वे ब्रह्माण्ड-विज्ञान से आरम्भ करती हैं, यह वर्णन करते हुए कि स्वयं ब्रह्मा, सृष्टि के रचयिता, भी भगवान् के ब्रह्माण्डीय शरीर को केवल “अपनी मानसिक आँखों से” ही देख पाए:

देवहूति ने कहा: ब्रह्मा (अजन्मा रचयिता) ने केवल अपनी मानसिक आँखों से आपके (ब्रह्माण्डीय) शरीर को देखा — जो पाँच स्थूल तत्त्वों, दस इन्द्रियों, पाँच इन्द्रिय-विषयों तथा मन से व्याप्त है — जिससे तीनों गुणों (प्रकृति के रूपों) की धारा उत्पन्न होती है, तथा जो सबका बीज है तथा अन्तिम प्रलय के समय ब्रह्माण्ड को जलमग्न करने वाले जल पर प्रकट हुआ, तथा जिसकी नाभि-कमल से स्वयं ब्रह्मा उत्पन्न हुए। (श्लोक 2)

यद्यपि आप निष्क्रिय हैं, आप अटल संकल्प तथा असंख्य अचिन्त्य शक्तियों से युक्त हैं, तथा समस्त जीवों के शासक हैं। यही कारण है कि, तीनों गुणों की प्रधानता के अनुसार अपनी शक्ति का विभाजन करके, आप ही सृष्टि, पालन तथा संहार को चलाते हैं। (श्लोक 3)

अपने पुत्र की वास्तविक पहचान को इस प्रकार सर्वोच्च शब्दों में स्थापित करने के पश्चात्, देवहूति उस पहचान की पूरी शक्ति को अपनी ही मातृत्व की घनिष्ठ, लगभग अकल्पनीय वास्तविकता की ओर मोड़ती हैं:

तब यह कैसे हो सकता है कि आप मेरे गर्भ में जन्मे — आप, जिनके उदर में प्रलय के समय सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड लुप्त हो जाता है, तथा जो कल्प के अन्त में अकेले एक वट-पत्र पर, अचिन्त्य शक्तियों से युक्त शिशु के रूप में, अपने पैर के अँगूठे को चूसते हुए विश्राम करते हैं? (श्लोक 4)

यह कोई मिथ्या विनम्रता नहीं है। यह वही सटीक भावनात्मक स्वर है जिसे भागवत बार-बार सच्ची भक्ति का लक्षण बताता है — भगवान् की अनन्त महिमा के प्रति विस्मय, तथा एक शिशु को स्तनपान कराने की कोमल, साधारण स्मृति, दोनों एक साथ, बिना किसी विरोधाभास के। देवहूति फिर बताती हैं कि भगवान् ऐसे रूप क्यों धारण करते हैं:

आप पापियों के विनाश तथा, हे भगवन्, अपनी आज्ञाओं का पालन करने वालों के उत्थान के लिए एक व्यक्तित्व धारण करते हैं। जिस प्रकार आप शूकर आदि (विभिन्न अन्य प्रयोजनों के लिए) का रूप धारण करते हैं, उसी प्रकार आपका यह अवतरण भी (संसार को) आत्म-साक्षात्कार का मार्ग दिखाने के लिए है। (श्लोक 5)

शूकर-अवतार (वराह, जिसका वर्णन एक पूर्ववर्ती स्कन्ध में हुआ है) का नाम अपने ही पुत्र के अवतरण के साथ एक ही साँस में लेकर, देवहूति अपने पुत्र के शिक्षा-कार्य को भगवान् के अवतारों के व्यापक क्रम में रखती हैं — प्रत्येक अवतार सोद्देश्य, प्रत्येक एक ऐसे संसार को दिया गया उपहार जिसे ठीक उस समय ठीक उसी प्रकार का मार्गदर्शन चाहिए। वे फिर एक ऐसे विषय की ओर मुड़ती हैं जो भागवत के आगामी स्कन्धों में बार-बार गूँजेगा: भगवान् के पावन नाम की वह असाधारण, लगभग विस्मयकारी शक्ति जो सबसे अधोगत व्यक्ति को भी शुद्ध कर सकती है:

आपके नामों को कभी-कभार सुनने तथा कीर्तन करने से, आपको प्रणाम करने अथवा आपका स्मरण करने मात्र से, एक चाण्डाल (जो कुत्ते का माँस खाता है) भी इसी जीवन में सोम-यज्ञ (एक ऐसा यज्ञ जो यजमान को महान् पवित्रता तथा असाधारण धार्मिक पुण्य प्रदान करता है) करने वाले ब्राह्मण के समान पूज्य बन जाता है! तब आपके दर्शन मात्र से जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति में कोई सन्देह नहीं हो सकता। (श्लोक 6) आह, कैसा आश्चर्य है कि एक चाण्डाल (जो कुत्ते का माँस पकाता है) भी केवल इसलिए अत्यन्त पूज्य बन जाता है क्योंकि आपका नाम उसकी जिह्वा की नोक पर है! नहीं, जो लोग आपका नाम उच्चारित करते हैं, उन्होंने (इस जन्म अथवा पूर्व जन्म में) कठोर तपस्या की है, पवित्र अग्नि में आहुतियाँ दी हैं, (पवित्र जल में) स्नान किया है, सदाचार से आचरण किया है, तथा वेदों का पाठ भी किया है। (श्लोक 7)

अहो बत श्वपचोऽतो गरीयान्
यज्जिह्वाग्रे वर्तते नाम तुभ्यम् ।
तेपुस्तपस्ते जुहुवुः सस्नुरार्या
ब्रह्मानूचुर्नाम गृणन्ति ये ते ॥ ७ ॥

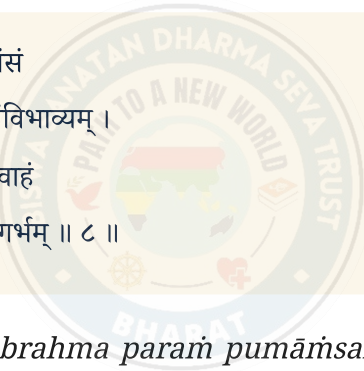
aho bata śva-paco 'to garīyān yaj-jihvāgre vartate nāma tubhyam tepus tapas te juhuvuḥ sasnur āryā brahmānūcur nāma gṛṇanti ye te

अर्थ: सबसे निकृष्ट, कुत्ते का मौस खाने वाली जाति में जन्मा व्यक्ति भी, जिस क्षण आपका नाम उसकी जिह्वा पर आ जाता है, उस पद से भी ऊँचा उठ जाता है — क्योंकि वह एक उच्चारण ही यह प्रमाणित कर देता है कि उसने, इसी जन्म में अथवा किसी पूर्व जन्म में, समस्त तपस्याएँ पूर्ण कर ली हैं, समस्त आहुतियाँ अर्पित कर दी हैं, समस्त तीर्थ कर लिए हैं, तथा समस्त शास्त्रों का अध्ययन कर लिया है। (श्रीमद्भागवतम् ३.३३.७)

इन दो श्लोकों को धीरे-धीरे पढ़ना उचित है। देवहूति केवल अमूर्त रूप में अपने पुत्र की स्तुति नहीं कर रही; वे एक दृढ़ विश्वास के रूप में यह कह रही हैं कि उनके नाम का उच्चारण मात्र — बिना किसी सहवर्ती अनुष्ठान-तन्त्र के — उस संसार में सबसे निम्न सामाजिक स्थिति पर विद्यमान व्यक्ति को भी, सबसे कठोर वैदिक यज्ञ से अर्जित स्थिति से भी ऊँची स्थिति तक उठा सकता है, जिसमें वे स्वयं रहती हैं। यह याद रखना उचित है कि यह घोषणा यहाँ, सांख्य, अनुष्ठान तथा दो मार्गों पर कपिल-गीता के लम्बे दार्शनिक विवेचन के ठीक अन्त में रखी गई है — देवहूति ने उस शिक्षा की सम्पूर्ण संरचना को आत्मसात् कर लिया है, तथा वे अपने ही शब्दों में जो सार निकालती हैं वह यह है: केवल नाम ही पर्याप्त है। उनका स्तोत्र अपने पुत्र की पहचान की एक असंदिग्ध घोषणा के साथ अपनी पराकाष्ठा तक पहुँचता है:

कपिल (मेरे पुत्र) के रूप में आप उसी परम सत्ता, सर्वोच्च पुरुष, से अभिन्न हैं, जिसे केवल अन्तर्मुखी मन में ही सही ढंग से समझा जा सकता है, तथा जो अपने ही तेज से तीनों गुणों की धारा (संसार-चक्र के रूप में) को समाप्त कर देते हैं। आप स्वयं भगवान् विष्णु हैं, वेदों के स्रोत। मैं आपको प्रणाम करती हूँ। (श्लोक ८)

तं त्वामहं ब्रह्म परं पुमांसं
प्रत्यक्स्रोतस्यात्मनि संविभाव्यम् ।
स्वतेजसा ध्वस्तगुणप्रवाहं
वन्दे विष्णुं कपिलं वेदगर्भम् ॥ ८ ॥



taṁ tvāṁ ahaṁ brahma paraṁ pumāṁsaṁ pratyak-srotasy ātmani saṁvibhāvyaṁ sva-tejasā dhvasta-guṇa-pravāhaṁ vande viṣṇuṁ kapilaṁ veda-garbham

अर्थ: यही देवहूति की अन्तिम पहचान है: जिस पुत्र को उन्होंने पाला, वही वह अजन्मा परम सत्ता है जिसे केवल इन्द्रियों से हटकर भीतर की ओर मुड़े हुए मन द्वारा ही जाना जा सकता है, जिसका अपना तेज ही तीनों गुणों की अनन्त धारा को विलीन कर देता है — स्वयं भगवान् विष्णु, जिनसे वेद स्वयं उत्पन्न होते हैं। (श्रीमद्भागवतम् ३.३३.८)



देवहूति का स्तोत्र अपनी परकाष्ठा पर पहुँचता है: "कपिल, मेरे पुत्र, के रूप में आप उसी परम सत्ता से अभिन्न हैं... आप स्वयं भगवान् विष्णु हैं, वेदों के स्रोत। मैं आपको प्रणाम करती हूँ" (श्लोक 8)।

कपिल के अन्तिम वचन तथा उनका प्रस्थान

मैत्रेय फिर बताते हैं कि भगवान् ने अपनी माता की स्तुति का उत्तर कैसे दिया — आगे किसी सिद्धान्त से नहीं, अपितु एक संक्षिप्त, कोमल तथा पूर्णतः निर्णायक वचन से:

मैत्रेय ने आगे कहा: इस प्रकार (देवहूति द्वारा) स्तुति किए जाने पर, भगवान् कपिल नाम धारण करने वाले परम पुरुष, जो पितृ-स्नेह से परिपूर्ण थे, अपनी माता से अटल स्वर में बोले। (श्लोक 9) भगवान् कपिल ने कहा: हे माता, मेरे द्वारा बताए गए सरल मार्ग का अनुसरण करके, तुम शीघ्र ही परम गन्तव्य (परम मुक्ति के रूप में) को प्राप्त होगी। (श्लोक 10) मेरे इस सिद्धान्त पर श्रद्धा रखो, जिसका पालन वेदों के आचार्यों ने भी किया है, ताकि तुम मेरी अजन्मा स्थिति को प्राप्त हो सको। जो इससे अनभिज्ञ हैं, वे (जन्म तथा) मृत्यु की प्रक्रिया से बार-बार गुजरते हैं। (श्लोक 11)

श्रद्धत्स्वैतन्मतं मह्यं जुष्टं यद्ब्रह्मवादिभिः ।

येन मामभयं याया मृत्युमृच्छन्त्यतद्विदः ॥ ११ ॥

śraddhatsvaitan mataṁ mahyaṁ juṣṭaṁ yad brahma-vāḍibhiḥ yena mām abhayaṁ yāyā mṛtyum ṛcchanty atad-vidaḥ

अर्थ: कपिल इसके अतिरिक्त कुछ नहीं माँगते — केवल विश्वास: इस शिक्षा पर श्रद्धा रखो, जिस मार्ग को वेदों के महान् आचार्यों ने स्वयं अपनाया है, तथा तुम मेरी ही अजन्मा प्रकृति में प्रवेश कर जाओगी; केवल वे ही, जो इससे अनजान रहते हैं, बार-बार जन्म-मृत्यु के चक्र से गुजरने को बाध्य होते हैं। (श्रीमद्भागवतम् ३.३३.११)

कपिल के शब्द-चयन पर रुकना उचित है — “सरल मार्ग।” नौ अध्यायों की दुरूह तत्त्वमीमांसा — प्रकृति, पुरुष, महत्तत्त्व, चौबीस तत्त्व, प्रस्थान के दो मार्ग, ब्रह्मलोक का प्रलय — के पश्चात्, अपनी माता को सिखाई गई हर बात का भगवान् का अपना सारांश यह है कि यह एक सरल मार्ग है, बशर्ते इसे उसी श्रद्धा तथा भक्ति के साथ चला जाए जो उन्होंने अभी-अभी अपने स्तोत्र में प्रदर्शित की है। यह पिछले अध्याय के इस केन्द्रीय दावे के साथ पूर्णतः सुसंगत है कि भक्तियोग शीघ्रगामी है; जो बाहर से एक जटिल दार्शनिक प्रणाली प्रतीत होती थी, वह भीतर से केवल विश्वास का मार्ग निकलती है। यह अन्तिम आश्वासन देकर, वह कार्य पूर्ण हो जाता है जिसके लिए कपिल का जन्म हुआ था:

मैत्रेय ने आगे कहा: अपनी माता को आत्म-साक्षात्कार का यह उत्तम मार्ग इस प्रकार दिखाकर, तथा उनकी अनुमति प्राप्त करके, जिन्होंने अब यह घोषित किया कि सब कुछ ब्रह्म ही है, भगवान् कपिल अपने मार्ग पर चले गए। (श्लोक 12)

यहाँ देवहूति की अपनी घोषणा — “कि सब कुछ ब्रह्म ही है” — उनकी यह औपचारिक स्वीकृति है कि उन्होंने शिक्षा को पूर्णतः प्राप्त तथा आत्मसात् कर लिया है; इसी स्वीकृति के पश्चात्, तथा उनकी अनुमति से ही, कपिल प्रस्थान करते हैं। जिस पुत्र का जन्म अपनी माता को शिक्षा देने के लिए हुआ था, उसने उन्हें शिक्षा देना पूर्ण कर लिया है, तथा अब, अपना उद्देश्य पूर्ण करके, आगे बढ़ जाता है।



“हे माता, मेरे द्वारा बताए गए सरल मार्ग का अनुसरण करके, तुम शीघ्र ही परम गन्तव्य को प्राप्त होगी” — देवहूति के प्रति कपिल का अन्तिम आशीर्वाद, प्रस्थान से पूर्व (श्लोक 10-12)।

एक दिव्य घर का त्याग

अध्याय का उत्तरार्ध पूर्णतः देवहूति की ओर मुड़ता है, तथा यह भागवत के सबसे शान्त किन्तु शक्तिशाली त्याग-दृश्यों में से एक के साथ आरम्भ होता है। कपिल की शिक्षा प्राप्त करने के बाद, देवहूति गम्भीरतापूर्वक आध्यात्मिक साधना में लग जाती हैं:

वे भी अपने पुत्र द्वारा सिखाई गई ध्यान-प्रक्रिया के अनुसार, उस आश्रम में, जो सरस्वती के (शीश पर) पुष्पों के मुकुट के समान खड़ा था, योग के अभ्यास में लग गई, तथा उन्हें मन की शान्ति प्राप्त हुई। (श्लोक 13) दिन में तीन बार स्नान करने के कारण, उनके सिर की घुँघराली लटें भूरी हो गई तथा जटा हो गई; जबकि चीथड़ों में लिपटा उनका शरीर कठोर तपस्या के परिणामस्वरूप कृश हो गया। (श्लोक 14)

इस रूपान्तरण को इतना उल्लेखनीय जो बनाता है वह है वह सब कुछ जिसे देवहूति इसे अपनाने के लिए त्याग रही हैं। पाठ रुककर, प्रेमपूर्ण तथा विशिष्ट विवरण के साथ, ऋषि कर्दम द्वारा अपनी योग-शक्ति से उनके लिए निर्मित उस घर के वैभव का वर्णन करता है — एक ऐसा घर, जिसे हमें बताया जाता है, देवताओं द्वारा भी लालायित किया जाता था:

उन्होंने अपने उस अतुलनीय घर का त्याग किया, जो प्रजापति ऋषि कर्दम की कठोर तपस्या तथा योग-शक्ति से समृद्ध किया गया था, तथा देवताओं द्वारा भी लालायित था, दूध के झाग के समान कोमल तथा श्वेत हाथी-दाँत की शय्याओं से युक्त, तथा स्वर्ण से अलंकृत, तथा अत्यन्त कोमल गद्दियों से युक्त स्वर्ण-आसनों से सुसज्जित। (श्लोक 15-16) उस घर की दीवारों में, जो पारदर्शी स्फटिक तथा बहुमूल्य पत्थरों से बनी थीं, सुन्दर नारी-प्रतिमाओं द्वारा धारण किए गए रत्नों के प्रकाश चमकते थे। (श्लोक 17) उन्होंने अपने घर से लगे उस उद्यान का भी त्याग किया, जो अपने अनेक पुष्पित दिव्य वृक्षों, कूजते पक्षी-युगलों तथा मधु-मत्त गुंजारित भ्रमरों से मनोहर था। (श्लोक 18) जब वे उस उद्यान के उस सरोवर में, जिसका जल कमलों की सुगन्ध से सुवासित था, कर्दम के साथ प्रवेश करती थीं, जो उन्हें अपना प्रेमपूर्ण ध्यान अर्पित करते थे, तब गन्धर्व तथा किन्नर (देवताओं के सेवक) उनकी स्तुति गाते थे। (श्लोक 19)

कथा यहाँ जान-बूझकर रुकती है। यह किसी सामान्य कठिनाई के जीवन का त्याग करने वाली कोई तपस्विनी नहीं है; यह एक ऐसी नारी है जो इतने असाधारण घर से दूर जा रही है कि स्वयं इन्द्र की रानियाँ भी उससे लालायित बताई जाती हैं — गन्धर्वों तथा किन्नरों द्वारा गाई गई, जिसकी दीवारें चमकते रत्नों से जड़ी हुई हैं। जो त्यागा जा रहा है उसका विस्तार ही मुख्य बिन्दु है: सृष्टि में कुछ भी, चाहे वह कितना भी दिव्य हो, चाहे उसके पति ने उनके लिए उसे अपनी ही तपस्या से कितना भी परिश्रम से अर्जित किया हो, उससे प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकता जो उनके पुत्र ने उन्हें दिखाया था। और फिर भी पाठ इस त्याग को सहज अथवा भावशून्य दिखाने से भी सावधानी से बचता है:

(यद्यपि उन्हें कोई खेद नहीं था) उस उद्यान को छोड़ते समय, जिसे स्वयं इन्द्र (स्वर्ग के स्वामी) की पत्नियाँ भी अत्यन्त लालायित होकर चाहती थीं, देवहूति के मुख पर एक उदास भाव था, जो अपने पुत्र से वियोग के कारण व्यथित थीं। (श्लोक 20)

उन्हें घर तथा उद्यान के लिए स्वयं कोई खेद नहीं है — किन्तु उनका मुख उदास है, तथा भागवत स्पष्ट रूप से बताता है क्यों: सुख-सुविधा के प्रति आसक्ति नहीं, अपितु अपने पुत्र की अनुपस्थिति का शोक। अध्याय इसे एक सरल, विजयी त्याग-कथा में बदलने से इनकार करता है; देवहूति की आध्यात्मिक उपलब्धि वास्तविक मातृ-शोक से होकर गुज़रती है, उसके इर्द-गिर्द से नहीं।



देवहूति कर्दम के रत्न-जड़ित घर तथा उद्यान के दिव्य वैभव का त्याग करती हैं — जिसे देवता भी लालायित करते थे — फिर भी उनका मुख उदास भाव धारण करता है, उस घर के लिए नहीं जिसे वे छोड़ रही हैं, अपितु उस पुत्र के लिए जिसे वे अब नहीं देख सकतीं (श्लोक 13-20)।

शोक से भगवान् तक: एक माता के प्रेम का मुड़ना

अध्याय का अगला भाग, अत्यन्त मनोवैज्ञानिक सटीकता के साथ, यह दिखाता है कि किस प्रकार अपने पुत्र के प्रस्थान पर देवहूति का शोक स्वयं ही उनकी मुक्ति का माध्यम बन जाता है:

(अपने पुत्र की उपस्थिति से उन्होंने अपने आपको किसी प्रकार सान्त्वना दे दी थी) जब उनके पति (ऋषि कर्दम) वन को चले गए थे; किन्तु सत्य को साक्षात्कार कर लेने के बावजूद, वे अपने पुत्र (भगवान् कपिल) से वियोग पर अत्यन्त अधीर हो गईं, जैसे कि गाय, जो अपने बछड़े से अत्यन्त स्नेह रखती है, उसके वियोग में शोकाकुल होती है। (श्लोक 21)

गाय के अपने बछड़े के लिए शोक की उपमा जान-बूझकर उसकी कठोरता के लिए चुनी गई है — यह कोई अमूर्त दार्शनिक हानि नहीं है, अपितु किसी भी जाति की माता को सन्तान से वियोग पर होने वाली वही सहज, शारीरिक पीड़ा है। एक आत्मा, जिसने बौद्धिक रूप से परम सत्य को पहले ही समझ लिया है, फिर भी इस पूर्णतः मानवीय ढंग से पीड़ित हो सकती है। किन्तु कपिल की शिक्षा देवहूति से इस प्रेम को दबाने अथवा नकारने के लिए नहीं कहती; अपितु पाठ दिखाता है कि उनके पुत्र के प्रति उनका प्रेम स्वाभाविक रूप से उनके ध्यान का ही स्वरूप बन जाता है:

अपने पुत्र, दिव्य कपिल, जो श्रीहरि से अभिन्न थे, पर अपने विचार को पूर्णतः केन्द्रित करके, हे पुत्र, वे शीघ्र ही ऐसे घर के प्रति भी उदासीन हो गईं (जिसका वर्णन ऊपर किया गया है)। (श्लोक 22) वे अब भगवान् के उस रूप का ध्यान करने लगीं, जो प्रसन्न मुखमुद्रा से सुशोभित तथा उनके पुत्र द्वारा ध्यान करने योग्य बताया गया था, अपने विचार को उस रूप पर सम्पूर्ण रूप में तथा उसके अंशों में भी केन्द्रित करते हुए। (श्लोक 23)

यह अध्याय के आध्यात्मिक तर्क में एक महत्वपूर्ण मोड़ है: देवहूति को मुक्ति की ओर बढ़ने के लिए किसी नए, निर्गुण ध्यान-विषय की रचना करने की आवश्यकता नहीं है। अपने पुत्र के प्रति उनका पहले से विद्यमान प्रेम स्वयं ही श्रीहरि के प्रति भक्ति है, क्योंकि उनका पुत्र स्वयं श्रीहरि हैं — वियोग का शोक, लगभग निर्बाध रूप से, योग की केन्द्रित स्मृति में परिवर्तित हो जाता है। इसके बाद उस ध्यान के पूर्ण साक्षात्कार में गहराने का वर्णन आता है:

भक्ति के अनवरत अभ्यास, अत्यन्त गहन वैराग्य, तथा एक के अपने कर्तव्यों के उचित निर्वहन से उत्पन्न होने वाले, ब्रह्मत्व (ब्रह्म से एकत्व) की ओर ले जाने वाले आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा पूर्णतः शुद्ध किए गए मन से, वे तब अपने ही स्वरूप को सर्वत्र प्रक्षेपित मानकर चिन्तन करने लगीं, प्रकृति के गुणों द्वारा उस पर आरोपित सीमाओं को उसके वास्तविक स्वरूप के साक्षात्कार द्वारा एक ओर रखकर। (श्लोक 24-25)

तीन तत्त्व जो कपिल ने पिछले अध्यायों में सिखाए थे — भक्ति, वैराग्य, तथा आध्यात्मिक ज्ञान — यहाँ एक साथ प्रकट होते हैं, ठीक वैसे ही जैसे अध्याय की केन्द्रीय शिक्षा ने वचन दिया था: भक्ति “शीघ्र ही” अन्य दोनों को उत्पन्न कर देती है, ठीक वैसे ही जैसे कपिल ने सामान्यतः भक्तियोग के विषय में कहा था।

यहाँ एक धर्मशास्त्रीय बिन्दु स्पष्ट रूप से रेखांकित करने योग्य है, जो अध्याय की कोमल कथा-सतह के नीचे सरलता से छूट सकता है। कपिल का नौ अध्यायों में फैला सम्पूर्ण सांख्य-विवेचन, अन्ततः, दर्शन ही था — तत्त्व, श्रेणियाँ, बन्धन तथा मुक्ति की संरचना। किन्तु जब यह वर्णन करने का क्षण आता है कि वास्तव में देवहूति को उस खाई के पार कौन ले गया, तो श्लोक 24-25 का क्रम सोद्देश्य है: भक्ति पहले आती है, तथा वैराग्य तथा ज्ञान उसी से उत्पन्न होते हैं, इसके विपरीत नहीं। सम्भवतः यही सबसे गहरा कारण है कि कपिल ने संसार को कोई निर्गुण प्रवचन देने के बजाय अपनी ही माता को शिक्षा देना चुना: इतने घनिष्ठ तथा भक्तिपूर्ण सम्बन्ध के भीतर ही वे यह प्रदर्शित कर सकते थे, एक जीवन्त उदाहरण द्वारा, कि प्रेमपूर्ण समर्पण — न कि तात्त्विक निपुणता — ही वह वस्तु है जो वास्तव में आत्मा को भगवान् में विलीन करती है।



अपने पुत्र की अनुपस्थिति पर एक माता का शोक, जिसकी तुलना अपने बछड़े के लिए शोक करती गाय से की गई है, बिना नकारे — उस भगवान् के रूप के अटूट ध्यान में रूपान्तरित हो जाता है, जिन्हें उन्होंने बालक के रूप में पाला था (श्लोक 21-25)।

परम मुक्ति: सिद्धपद तथा पावन नदी

अध्याय अब अपनी केन्द्रीय घटना की ओर बढ़ता है — देवहूति की मुक्ति का वह क्षण, जिसका वर्णन उसके विषय से मेल खाती एक शान्ति के साथ किया गया है:

अपने मन को अब ब्रह्म में, जो सभी जीवों का आधार है तथा भगवान् से अभिन्न है, स्थिर करके, वे अब स्वयं को जीव नहीं मानती थीं, तथा तदनुसार समस्त क्लेशों से मुक्त होकर परम मुक्ति को प्राप्त हुई। (श्लोक 26) नित्य समाधि (गहन ध्यान) में दृढ़तापूर्वक स्थापित होकर, इन्द्रिय-विषयों की वास्तविकता के विषय में उनका भ्रम अब समाप्त हो गया, तथा वे अपने शरीर के प्रति उतनी ही अचेत हो गई जितना कि नींद से जागा हुआ मनुष्य स्वप्न में देखे गए शरीर को याद नहीं रखता। (श्लोक 27)

एक स्वप्न से जागे हुए मनुष्य की उपमा, जो अब अपने स्वप्न-शरीर को याद नहीं रखता, मुक्ति के लिए भागवत की सबसे सटीक छवियों में से एक है: यह मिथ्या आत्मा का हिंसक विनाश नहीं, अपितु सच्चे जागरण के आने पर उसकी प्रासंगिकता का स्वाभाविक अन्त मात्र है। पाठ फिर, लगभग कोमलता से, यह वर्णन करता है कि इस अवस्था में देवहूति के भौतिक शरीर का क्या हुआ:

उनका शरीर, यद्यपि दूसरों (उनके पति द्वारा आश्रम में बुलाई गई तथा उनकी देखभाल हेतु ठहराई गई विद्याधर कन्याओं) द्वारा पोषित था, दुर्बल नहीं हुआ क्योंकि उसमें कोई मानसिक व्यथा नहीं थी। यद्यपि धूल की परतों से आच्छादित था, फिर भी वह धुएँ से ढकी अग्नि के समान उसमें से चमकता था। (श्लोक 28) भगवान् वासुदेव में अपने मन के पूर्णतः लीन हो जाने के कारण, उन्हें अपने ही शरीर का — जो पूर्णतः तपस्या तथा योग को समर्पित था, तथा जिसे विधाता द्वारा बनाए रखा जा रहा था — भान तक नहीं रहा, यहाँ तक कि जब उनके बाल खुल गए तथा उनके वस्त्र उनके शरीर से गिर गए। (श्लोक 29)

धुएँ को ढँकने वाली अग्नि की छवि — बाहर से धूल, भीतर से तेज — एक ऐसी आत्मा का चित्रण करने का एक सशक्त तथा किफायती तरीका है जिसकी बाह्य परिस्थिति (एक असंवारित, तपस्विनी शरीर) का उसकी आन्तरिक अवस्था (भगवान् में पूर्ण, तेजोमय लीनता) से कोई सम्बन्ध नहीं रह गया है। अध्याय फिर अपना केन्द्रीय उद्घोष प्रस्तुत करता है:

इस प्रकार, भगवान् कपिल द्वारा बताए गए मार्ग का अनुसरण करते हुए, वे शीघ्र ही उस भगवान् के धाम को प्राप्त हो गई, जो सदा मुक्त हैं तथा परमात्मा अथवा ब्रह्म से अभिन्न हैं। (श्लोक 30) हे शूरवीर विदुर, वह अत्यन्त पवित्र स्थान, जहाँ उन्हें परम मुक्ति प्राप्त हुई, तीनों लोकों में 'सिद्धपद' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। (श्लोक 31) उनका नश्वर शरीर, जो योग द्वारा अपनी सम्पूर्ण मलिनता से शुद्ध हो चुका था, एक ऐसी नदी में रूपान्तरित हो गया, जो, हे सौम्य विदुर, समस्त नदियों में अग्रणी मानी जाती है, (उसमें स्नान करने वालों को) सर्वोच्च आशीर्वाद प्रदान करती है, तथा सिद्धों द्वारा (बार-बार) आश्रित की जाती है। (श्लोक 32)

यह समापन-छवि सम्पूर्ण तृतीय स्कन्ध की सबसे उल्लेखनीय छवियों में से एक है: देवहूति का शरीर स्वयं, दशकों की योग-साधना से शुद्ध, केवल साधारण अर्थ में मृत्यु के समय विलीन नहीं हो जाता — वह एक पावन नदी में रूपान्तरित हो जाता है, जो तब से युगों-युगों तक तीर्थयात्रियों तथा सिद्धों के लिए निरन्तर आशीर्वाद का स्थल बना रहता है। उनकी मुक्ति का वह स्थल, “सिद्धपद” — शाब्दिक रूप से, “सिद्धि का स्थान” अथवा “सिद्धों के चरण-चिह्न” — पावन भूगोल में एक स्थायी चिह्न बन जाता है, एक भौतिक स्मृति-चिह्न, जिसे आज भी “तीनों लोकों में” स्मरण किया जाता है, इस बात का कि भगवान् की शिक्षा के प्रति एक साधारण मानव आत्मा का पूर्ण समर्पण क्या प्राप्त कर सकता है।



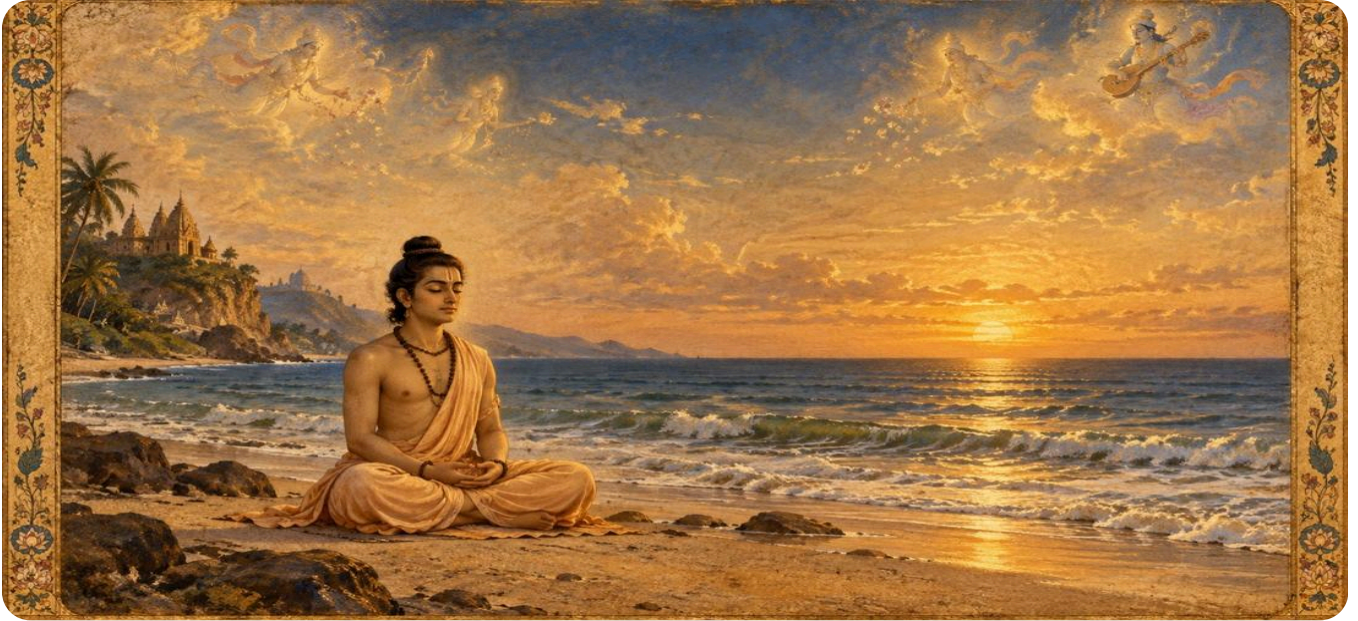
देवहूति को उस पावन स्थान पर परम मुक्ति प्राप्त होती है जो सदा के लिए 'सिद्धपद' के नाम से जाना जाता है; उनका शुद्ध किया गया नश्वर शरीर एक ऐसी नदी में रूपान्तरित हो जाता है जो उसमें स्नान करने वालों को सर्वोच्च आशीर्वाद प्रदान करती है (श्लोक 30-32)।

समुद्र-तट पर कपिल का अपना धाम

देवहूति की मुक्ति के विवरण को पूर्ण करने के बाद, मैत्रेय अन्ततः स्वयं कपिल की ओर मुड़ते हैं, यह वर्णन करते हुए कि अपनी माता को छोड़ने के बाद भगवान् कहाँ गए तथा वहाँ वे क्या करना जारी रखते हैं:

अपनी माता (देवहूति) से विदा लेकर, भगवान् कपिल, महान् योगी, अपने पिता के आश्रम से उत्तर-पूर्व दिशा की ओर प्रस्थित हुए। (श्लोक 33) स्वयं समुद्र द्वारा विधिवत् पूजित तथा धाम प्रदत्त होकर, वे (वहाँ आज भी) पूर्ण मानसिक शान्ति में, तीनों लोकों के कल्याण हेतु गहन ध्यान में लीन, तथा सिद्धों, चारणों (दिव्य गायकों), गन्धर्वों (दिव्य संगीतकारों) तथा ऋषियों के साथ-साथ अप्सराओं (दिव्य नर्तकियों) के समूहों द्वारा भी (सतत) स्तुति किए जाते हुए, तथा सांख्य के आचार्यों (आसुरि आदि) द्वारा प्रशंसित होते हुए, निवास करते हैं। (श्लोक 34-35)

कपिल की यह समापन-छवि विचारणीय है। अपनी माता के प्रति अपना शिक्षा-कर्तव्य पूर्ण करते ही वे कथा से लुप्त नहीं हो जाते; वे एक निरन्तर वर्तमान-काल में (“आज भी”), “तीनों लोकों के कल्याण” हेतु ध्यान में लीन बने रहते हैं — उनका उद्देश्य स्वाभाविक रूप से अपनी माता की एकल आत्मा से सम्पूर्ण सृष्टि के कल्याण तक विस्तृत हो जाता है। कपिल के मिशन का अध्याय का यह विवरण इस प्रकार किसी अन्त के साथ नहीं, अपितु एक निरन्तरता के साथ समाप्त होता है: वह गुरु जिन्होंने अपनी माता को सांख्य-प्रणाली दी, भागवत की अपनी कथा के अनुसार, अभी भी उसी ध्यान में स्थित हैं, अभी भी ऋषियों तथा दिव्य प्राणियों द्वारा समान रूप से सम्मानित हैं।



भगवान् कपिल समुद्र के तट की ओर प्रस्थित होते हैं, जहाँ वे, आज भी, तीनों लोकों के कल्याण हेतु गहन ध्यान में लीन, ऋषियों, सिद्धों तथा दिव्य प्राणियों द्वारा स्तुति किए जाते हुए, निवास करते हैं (श्लोक 33-35)।

इस शिक्षा को सुनने का फल

अध्याय — तथा उसके साथ ही तृतीय स्कन्ध के दस अध्यायों में विस्तृत सम्पूर्ण “भगवान् कपिल की कथा” — मैत्रेय के सीधे विदुर की ओर मुड़ने के साथ समाप्त होता है, तथा उनके माध्यम से तब से हर पाठक तथा श्रोता की ओर, यह स्पष्ट रूप से बताने के लिए कि इस कथा को प्राप्त करने मात्र से क्या प्राप्त होता है:

हे प्रिय तथा निष्पाप विदुर, मैंने तुम्हें इस प्रकार वह बता दिया है जो तुमने मुझसे पूछा था, अर्थात् भगवान् कपिल तथा देवहूति (उनकी माता) के बीच हुए पावन संवाद को। (श्लोक 36) जो कोई भी दिव्य ऋषि कपिल की इस शिक्षा को, जो भगवत्-साक्षात्कार के मार्गों तथा साधनों को सिखाने वाले सभी सिद्धान्तों में सबसे गोपनीय है, सुनता है, तथा (इसी प्रकार) जो कोई इसका प्रवचन करता है, वह भगवान् विष्णु (जो अपनी ध्वजा पर पक्षिराज गरुड़ का चिह्न धारण करते हैं) पर अपना मन स्थिर करने में समर्थ होता है तथा भगवान् के चरणों की (निकटता को) प्राप्त होता है। (श्लोक 37)

यह सम्पूर्ण कपिल-गीता के लिए एक उपयुक्त समापन है: एक ऐसी शिक्षा जो एक वन-आश्रम की एकान्तता में एक पुत्र द्वारा अपनी माता को दी गई शिक्षा से आरम्भ हुई, यह घोषित करते हुए समाप्त होती है कि इसका लाभ उस मूल एकल श्रोता तक ही सीमित नहीं है। जो कोई भी इसे सुनता है, अथवा जो कोई इसे आगे दूसरों को सिखाता है, वह उसी कृपा-प्रवाह में सम्मिलित हो जाता है जिसने देवहूति को सिद्धपद तक पहुँचाया — एक ऐसा वचन जो इस अध्याय के प्रथम श्लोकों के साथ पूर्णतः सुसंगत है, जिनमें देवहूति ने स्वयं घोषित किया था कि भगवान् का नाम, एक बार सुना अथवा उच्चारित किया गया, पूर्णतः शुद्ध कर देता है।

अध्याय का पुष्पिका-वाक्य इस प्रवचन को, तथा सम्पूर्ण स्कन्ध को, एक असाधारण औपचारिकता के साथ समाप्त करता है: “इस प्रकार ‘भगवान् कपिल की कथा’ का यह त्रयस्त्रिंश प्रवचन, महान् एवं गौरवशाली भागवत-पुराण के तृतीय स्कन्ध में समाप्त होता है, जिसे परमहंस-संहिता के नाम से भी जाना जाता है, जिसकी रचना ऋषि वेदव्यास ने की, तथा जो अठारह सहस्र श्लोकों से युक्त है।” इस पुष्पिका के तुरन्त पश्चात्, गीता प्रेस संस्करण “तृतीय स्कन्ध का समापन” मुद्रित करता है।

चिन्तन: एक स्कन्ध अपना वृत्त पूर्ण करता है

अध्याय 33 श्रीमद्भागवतम् के तृतीय स्कन्ध को एक ऐसे ढंग से समाप्त करता है जो उसके अपने आरम्भ को प्रतिबिम्बित करता है। स्कन्ध का आरम्भ विदुर से हुआ था, जो शोकाकुल तथा खोजरत होकर मैत्रेय से शिक्षा प्राप्त करने के लिए निकले थे; यह देवहूति के साथ समाप्त होता है, जिन्होंने एक पुत्र से माँगी जा सकने वाली गहनतम शिक्षा प्राप्त की, तथा पूर्णतः रूपान्तरित हो गई — उनका शोक ध्यान में, उनका ध्यान मुक्ति में, तथा उनका अपना शरीर आशीर्वाद की एक ऐसी नदी में परिवर्तित हो गया जो उनके व्यक्तिगत जीवन से अगणित युगों तक जीवित रहता है। इन दोनों बिन्दुओं के बीच कपिल-गीता की सम्पूर्ण संरचना निहित है: प्रकृति तथा पुरुष की प्रकृति, कर्मफल में आसक्त आत्मा का संकटपूर्ण संसार-भ्रमण, प्रस्थान के दो मार्ग, तथा अन्ततः यह घोषणा कि केवल भक्ति ही शीघ्रता तथा प्रत्यक्षता से भगवान् तक पहुँचती है। यह अन्तिम अध्याय, इससे पूर्व के किसी भी दार्शनिक विवेचन से अधिक शक्तिशाली रूप से, यह दर्शाता है कि यह शिक्षा वास्तव में काम करती है — केवल समझने योग्य सिद्धान्त के रूप में नहीं, अपितु एक ऐसे मार्ग के रूप में जिसे एक साधारण, शोकाकुल माता अन्त तक चल सकती थी। कपिल के अपने अन्तिम शब्द उनके प्रति आगे कोई तत्त्वमीमांसा नहीं थे, अपितु एक सरल वचन थे: *सरल मार्ग*। देवहूति ने उन पर विश्वास किया, उस पर चलीं, तथा पहुँच गई। तथा स्वयं कपिल, अपना कार्य पूर्ण करके, संसार से पूर्णतः विलुप्त नहीं हुए, अपितु समुद्र के तट पर आसन ग्रहण किया, जहाँ भागवत हमें बताता है कि वे आज भी हैं, तीनों लोकों के कल्याण हेतु ध्यान में लीन — एक ऐसे स्कन्ध को समाप्त करने के लिए एक उपयुक्त छवि, जो अपने प्रथम अध्याय से ही सम्पूर्ण सृष्टि के कल्याण से कम किसी भी वस्तु से सम्बन्धित नहीं रहा है।

यह अध्याय श्रीमद्भागवतम् के तृतीय स्कन्ध को पूर्णतः समाप्त करता है — तैंतीस अध्याय, हिरण्याक्ष की मृत्यु के पश्चात् की घटनाओं तथा विदुर की मैत्रेय से भेंट से लेकर, सृष्टि-वर्णन, कर्दम तथा देवहूति की कथा, तथा सम्पूर्ण कपिल-गीता से होते हुए, सिद्धपद में देवहूति की मुक्ति तथा समुद्र-तट पर कपिल के धाम-ग्रहण तक। *श्रीमद्भागवतम् विज्जडम* शृंखला यहाँ से चतुर्थ स्कन्ध में आगे बढ़ती है, जिसे गीता प्रेस संस्करण तुरन्त स्वायम्भुव मनु की पुत्रियों की कथा से आरम्भ करता है। हम हर उस पाठक तथा श्रोता के आभारी हैं जो तृतीय स्कन्ध में हमारे साथ चला है, तथा हम आपको इस शृंखला के अगले अध्याय के आरम्भ होने पर यात्रा जारी रखने के लिए आमन्त्रित करते हैं।

सन्दर्भ

- मूल स्रोत: *श्रीमद्भागवत महापुराण* (भागवत पुराण), गीता प्रेस, गोरखपुर — अंग्रेज़ी सम्पूर्ण संस्करण, तृतीय स्कन्ध, त्रयस्त्रिंश प्रवचन, “देवहूति का ज्ञानोदय और मोक्ष-प्राप्ति” (तृतीय स्कन्ध का अन्तिम अध्याय)
- शृंखला: *श्रीमद्भागवतम् विज्जडम* — श्रीमद्भागवत महापुराण के माध्यम से अध्याय-दर-अध्याय एक भक्तिपूर्ण यात्रा
- आध्यात्मिक मार्गदर्शन में प्रस्तुत: पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र
- शृंखला-टिप्पणी: यह लेख श्रीमद्भागवतम् के तृतीय स्कन्ध को समाप्त करता है। शृंखला आगे चतुर्थ स्कन्ध, अध्याय 1 के साथ जारी रहती है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-3-chapter-33-devahuti-gyan-prakash-param-mukti.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञानम् • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

